डॉ. बिभा कुमारी

हिंदी विभाग

विश्वेश्वर सिंह जनता महाविद्यालय

अध्ययन सामग्री – बीए हिंदी प्रतिष्ठा, तृतीय वर्ष, पत्र – अष्टम

अलंकार सिद्धांत : परिचय

अलंकार को काव्य के एक तत्व के रूप में तो विद्वानों ने स्वीकार किया था, परंतु अलंकार को सिद्धांत के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त करने के लिए बहुत लंबी यात्रा करनी पड़ी। भरतमुनि से पूर्व से ही संस्कृत – साहित्य में उपमा आदि का विवेचन मिलता है। भरतमुनि द्वारा निरूपित 'उपमालंकार' के पूर्णोपमा तथा लुप्तोपमा के भेद मूलतः यास्क के 'निरुक्त में ही मिल जाते हैं। बादरायण के वेदांत सूत्र में 'उपमा' और 'रूपक' इन दोनों का ही निर्देश है। भरतमुनि से भी पहले ही वैदिक तथा संस्कृत साहित्य में उपमा, उसके भेद तथा रूपक की स्थिति विद्यमान थी, भरतमुनि ने मुख्य रूप से चार अलंकारों उपमा, दीपक, रूपक तथा यमक अलंकारों का निरूपण किया है, जिनमें उपमा और रूपक की पूर्वस्थिति के स्पष्ट प्रमाण मिलते हैं, दीपक और यमक की पूर्वस्थिति का भी अनुमान विद्वानों ने किया है। भरत ने इन्हें वाणी के अलंकार कहा है। भरतमुनि से पूर्व किसी अलंकार शास्त्र की स्थिति दिखाई नहीं देती है।

भामह का 'काव्यालंकार' श्रव्य काव्य का विवेचन करने वाला पहला शास्त्रीय ग्रंथ माना जाता है। अलंकार शब्द का प्रयोग भामह ने ऐसी उक्ति के लिए किया जो वक्रार्थ की विधायक हो। वक्रार्थ की विधायक उक्ति को उन्होंने वक्रोक्ति कहा। वक्रोक्ति को उन्होंने सम्पूर्ण अलंकारों में व्यापक बताते हुए उसे अलंकार का एकमात्र आश्रय कहा। वक्रोक्ति से उनका अभिप्राय सम्पूर्ण अलंकारों की प्राणभूत अतिशय उक्ति से है। वक्रोक्ति के बिना वे अलंकार का अस्तित्व मानते ही नहीं हैं, उनके अनुसार अर्थ को प्रकाशित करने वाली समस्त विद्या वक्रोक्ति ही है। दण्डी (7वीं शताब्दी) ने अपने 'काव्यादर्श' में काव्य की शोभा बढ़ाने वाले धर्मों को अलंकार कहा –

"काव्यशोभाकारान् धर्मान् अलंकारान् प्रचक्षते"।

उद्भव ने "काव्यालंकार सार संग्रह" में भामह द्वारा प्रतिपादित सिध्दांतों की व्याख्या करके अलंकार सम्प्रदाय को अत्यंत व्यापक स्वरूप प्रदान किया। आचार्य वामन ने अलंकार शब्द का प्रयोग संकीर्ण एवं व्यापक अर्थों में करते हुए इसकी विवेचना की –

"काव्यंग्राह्यंलंकारात् सौन्दर्यमलंकारः"

अलंकारवादी आचार्यों ने स्वतंत्र रूप से रस की सत्ता स्वीकार नहीं की है। वे रसवत्, प्रेयस, ऊर्जस्वित और समाहित इत्यादि चार प्रकार के अलंकार मानते हैं और उन्हीं के भीतर रस का अंतर्भाव स्वीकार किया। अलंकारवादी अचार्यों के अनुसार काव्य को प्राण देनेवाली प्रमुख शक्ति अलंकार ही है। अलंकार – सिद्धांत के अनुयायी आचार्यों ने सौन्दर्य - सर्जन को काव्यकला का चरम साध्य माना है। आचार्य भामह ने शब्दार्थों के सहभाव पर विशेष बल

दिया। आचार्य उद्भट ने अपने ग्रंथ 'काव्यालंकार सार संग्रह' में दण्डी तथा भामह प्रतिपादित अलंकार तत्त्व की संकल्पना को और अधिक व्यापक तथा स्पष्ट रूप देने का प्रयास किया।

आचार्य वामन ने सर्वप्रथम अलंकार शब्द में निहित आशय को अधिक स्पष्ट करने का प्रयत्न किया।

आचार्य कुंतक ने अलंकार को कलात्मक रचना से अभिन्न माना है। आचार्य कुंतक ने अलंकार शब्द को सौन्दर्य का पर्याय सा माना है और इसमें शब्द, अर्थ, पद, वाक्य, रीति, गुण, रस तथा अलंकार सभी का समावेश किया है।

भारतीय काव्यशास्त्र में अलंकार – सिद्धांत के महत्व और मूल्यांकन का प्रश्न बहुत जटिल रहा है। विभिन्न अचार्यों ने अलंकार सिद्धांत को लेकर अपने विचार रखे हैं।

अलंकारवादी विचारकों ने अलंकार – सिद्धांत को काव्य संरचना के आधारभूत सिद्धांत के रूप में मान्यता प्रदान की। कला – संरचना के मूल में निहित कवि – दृष्टि को और उसके साध्य को ' अलंकार' शब्द ही पूर्ण रूप से संप्रेषित करता है। काव्यगत आंतरिक और बाह्य सौन्दर्य अलंकार तत्व की ही देन है।